क्विर विमर्श

लेसबियन, गे, बैसेक्सुअल, ट्रान्सजेंडर

के. वनजा

क्विर विमर्श

लेसबियन, गे, बैसेक्सुअल, ट्रान्सजेंडर

के. वनजा

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: मई , 2023

© के. वनजा

के. वनजा

विह्वलता....

मेरा मन हमेशा पददलितों एवं किनारे के लोगों के लिए विह्वल है। उनकी स्थिति को देखकर हृदय पिघल जाता है। उनकी सहायता करने का मार्ग मैं खोजती हूँ। लेकिन कभी कभी लगता है कि मैं हार रही हूँ। लेकिन हार माननेवाली नहीं हूँ मैं। अन्याय को कभी भी बर्दाश्त नहीं कर पाऊँगी। अकेली हूँ तो भी लड़ती हूँ। इसी सोच का परिणाम है यह किताब भी। हमारे समाज में कितने लोग हाशिये से भी बहुत दूर हैं। उनको हाशिए तक आने का भी अधिकार नहीं है। ऐसे कुछ लोगों का समूह है क्विर। क्विर में लेसबियन, गे, बैसेक्सुअल और ट्रान्सजेंडर हैं। उनका जन्म एक सेक्स में है तो भी कामेच्छा के आधार पर उनका अलग जेंडर रूपायित होता है। समाज इस शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को मानने के लिए तैयार नहीं है, विशेषकर काम संबंधी। उन्हें हमारे साथ एक स्पेस देने के लिए हम हिचकते हैं। यह भी नहीं जहाँ तक संभव हो उसका शोषण भी करने की ताक में हैं। इसकी वजह यह है कि युगों से धर्म एवं सत्ता द्वारा स्वीकृत विपरीत लिंगी सेक्स से अलग किसी संबन्ध को हम स्वीकारते नहीं। उन्हें कानूनी स्वीकृति प्राप्त है तो भी राजनीति, सत्ता और समाज भी उसे पीछे की ओर हटा देने में आगे हैं। इस परिस्थिति में साहित्य एवं कला में उन्हें काफी स्पेस प्रदान करने पर समाज के नज़रिए में अहिस्ता

अहिस्ता बदलाव आने की संभावना है। इस किताब में तमाम हिन्दी के अन्य विमर्शों के समान क्विर को भी एक विमर्श के रूप में प्रतिष्ठित करने की कोशिश की गई है।

उपर्युक्त लक्ष्य से मैं ने क्विर सिद्धान्त के साथ हिन्दी साहित्य को थोड़ा परखने की कोशिश की। ट्रान्सजेंडर संबंधी बहुत सारी रचनाएँ प्रकाशित हुईं, चर्चायें भी चल रही हैं। लेकिन लेसबियन, गे, बैसेक्सुअल पर चर्चायें तक नहीं हो रही हैं। मेरी कुतूहलता मुझे आगे की ओर ले गयी। तब संख्या में कम हैं तो भी कुछ रचनाएँ मेरे हाथ आईं। क्विर को समझने के लिए कई अंग्रेज़ी किताबों को ढूँढ निकाला। वाणी प्रकाशन के प्रबंध निदेशक अरुण महेश्वरी ने भी मेरी मदद की थी, इस सिलसिले में।

पुस्तक की सार्थक भूमिका लिखकर प्रो. एन. मोहननजी ने पुस्तक की गंभीरता को बढ़ाया। पुस्तक का प्रकाशन कर पाठकों के सम्मुख पहुँचाने में तैयार हुए वाणी प्रकाशन के प्रति मेरी कृतज्ञता।

के. वनजा

अभिरामम

सुरभी रोड

इडप्पल्ली पी.ओ

कोच्ची - 682 024

भूमिका

'क्विर विमर्श' शीर्षक अपनी नवीनतम और हिन्दी साहित्य में अपने आप में प्रथम पुस्तक का अंतिम प्रारूप जब पूरा हो गया तो मित्रवर वनजा ने मुझसे उस पुस्तक की भूमिका लिखने को कहा तो मुझे उतना सीरियस नहीं लगा। पर बाद में पुस्तक के पूरे अध्याय देकर कहा तो लगा कि मैटर कुछ गंभीर है। मुझे यह भी लगा कि वह मुझ पर बड़ा दायित्व छोड़ रही है। फिर कई दिनों तक उसके बारे में सोचता रहा, सारे अध्याय पुन: पढ़ लिये तो लगा कि यह बोझील काम है। क्योंकि यह पुस्तक ही चुनौतीपूर्ण है, इसके लिए भूमिका लिखना और भी। फिर भी मैं ने स्वीकार किया और गहरे में सोचा-विचारा तो कई सवाल मेरे सामने उभर आए।

यह जगत क्या है? किसके लिए है? यह जगत एक बसेरा है। यह सब के लिए है। इसमें मनुष्य पेड़-पौधे, नदी-नाले, पहाड़-पठार सबको बराबरी के साथ जीने-मिटने की जगह है। गोया कि यह मिट्टी सब के लिए है। ताकतवरों को अधिकार जमाकर दुर्बलों पर दबाव डालना नहीं। सबल-निर्बल को अपनी अलग इयत्ता को बनाए रखते हुए जीने का पूरा अधिकार है। यह अधिकार वहीं स्वीकृत हो जाता है जहाँ सांस्कृतिक गरिमा हो। मतलब सुसंस्कृत समाज ही एक दूसरे की इयत्ता को, अस्मिता को, स्वत्व को याने कि स्वातंत्र्य को स्वीकार कर सकता है।

इसलिए जिस समाज में मनुष्य, प्रकृति, जीव-जन्तु आदि की समान स्वीकृति होती है वह समाज निस्सन्देह सभ्य एवं सुसंस्कृत माना जाएगा।

जीवन का आधार ही यौनता है। उसके बिना कोई सृष्टिकर्म संभव नहीं। सभी जीवजन्तुओं में यौनता का अनिवार्य सान्निध्य है। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणि है जो यौनता को सुख का उपादान बनाता है और उसको जीवन में प्रमुख स्थान भी देता है। वेदों और पुराणों में उसका उल्लेख है। कहा गया कि 'धर्मार्थकाममोक्षः'। मनुष्य सहित सभी जीवजन्तुओं का सहज विकार है यौनेच्छा। भारत ऐसा देश है जहाँ कामसूत्र लिखा गया था। वात्स्यायन ने काम को शास्त्र बताया और कहा कि धर्म केन्द्रित काम ही श्रेष्ठ है। काम अनिवार्य है, वह सृजनात्मकता की चालक शक्ति है, पर नियंत्रित काम ही श्रेष्ठ है। याने कि वात्स्यायन ने भी यौन उच्छृंखलता को माना नहीं। और कहा काम कभी भी कामवासना को शांत नहीं करता इसलिए काम का आधार धर्म होना चाहिए कि संयमित काम साधना ही श्रेष्ठ है, स्वीकार्य है।

हावलेक एल्लिच्च ने कहा जीवन का आधार लिंग भेद पर अवस्थित है। इसलिए लिंग-भेद-ज्ञान के बिना हम जीवन का सम्मान नहीं कर सकते। समाज में सर्वस्वीकृत यौनता या लैंगिक संबंध विपरीत लैंगिकता है। याने कि स्त्री-पुरुष के बीच का यौन संबंध। इसको सर्वस्वीकृति मिलने का कारण और कुछ नहीं, वह बहुसंख्यकों का है। इसलिए सामाजिक स्वीकृति मिल गयी है। इसे प्रकृत माना गया। वेद में इसे प्रकृति और इतर को विकृति कहा गया है। मतलब बहुसंख्यकों की

वृत्ति को प्रकृत (Natural) और अल्पसंख्यकों की वृत्ति को विकृत याने प्रकृति विरुद्ध (Unnatural) माना गया और अल्पसंख्यकों की यौनवृत्ति को हीन समझा गया। दर असल यह गलत दृष्टि है। बहु संख्यक और अल्पसंख्यक की वृत्तियों की समान स्वीकृति होनी चाहिए। क्योंकि समाज लैंगिक बहुलता से संपन्न है, इसकी जानकारी ही नहीं स्वीकृति होनी चाहिए।

सेक्स (यौनता) और लैंगिकता भिन्न है। सेक्स याने यौनता जैविक शरीर केन्द्रित है पर लिंग (जेंडर) इच्छा केन्द्रित है। लैंगिकता बदलती है प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा के अनुसार। स्त्री होने पर भी स्त्री के प्रति लैंगिक इच्छा होना, पुरुष का पुरुष के प्रति, उसी प्रकार कुछ लोगों को स्त्री और पुरुष दोनों के प्रति लैंगिक इच्छा होना स्वाभाविक है। पर समाज के लिए ये सब विकृतियाँ हैं, अस्वाभाविक हैं और असामाजिक हैं। उनकी मान्यता यह है कि बहुसंख्यक लोगों की वृत्तियाँ ही प्रकृत हैं, शेष सब विकृत याने कि अस्वाभाविक एवं निंदनीय हैं। सचमुच यह सही नहीं। उन सारी विकृतियों को प्रकृत मानने की क्षमता जब समाज हासिल करता है तब ही वह समाज सभ्य बन जाता है। वहाँ सबकी स्वीकृति समान रूप से होती है, होनी चाहिए।

यद्यपि लेसबियन, गे, बैसेक्सुअल और ट्रान्सजेंडर समाज में पहले ही वर्तमान थे तथापि इन्हें निन्दनीय समझा जाता था । इसलिए वे सचमुच छिपे रहे। समाज विपरीत रति को ही मान्यता देता था। पर ज्ञान स्थिति के परिणास्वरूप इन

रुचिभेदवालों ने समझ लिया कि हम भी प्रकृत हैं, विकृत नहीं। समाज की समझ अज्ञता के कारण है। इसलिए एल जी बी टी यों ने अपनी शैक्षिक एवं सामाजिक समझ के तहत अपने को पहचान लिया और अपने लिए लड़ना शुरु कर दिया। उनका दावा है कि हम भी प्रकृत हैं, हमें भी समाज में बराबरी के साथ जीने का हक है, अधिकार है। हम चाहे अल्पसंख्यक क्यों न हो, सृष्टि की विशेषता है। इसमें हमारा कोई दोष नहीं, दोष देखनेवालों की मानसिकता में है। इसलिए पूरी स्वतंत्रता, बराबरी एवं अधिकार के साथ इस समाज में जीने का अधिकार है। इस अधिकार की माँग करते हुए, एल जी बी टी के लोगों ने 'कमिंग अउट' करना शुरु किया। कमिंग अउट सचमुच आत्मस्वीकृति है। वे स्वीकार करते हैं कि मैं लेसबियन हूँ, गे हूँ, बैसेक्सुअल हूँ या ट्रान्सजेंडर हूँ। यह आत्मस्वीकृति युग-युगों की निंदा, अपमान एवं दमन की प्रतिक्रिया है। यह सचमुच अस्मिता की उद्घोषणा है। कोई दुराव-छुपाव नहीं, खुल्लम-खुल्ला बोल देने की क्षमता उन्होंने अर्जित की है, शिक्षा तथा उससे आत्मसात विश्वबोध से।

6 सितंबर 2018 को समलैंगिकता को वैधिक घोषित किया उच्च न्यायालय ने। वैसे ही गे, बैसेक्सुअल, लेसबियन सबको कानूनी स्वीकृति दी गई। यह सचमुच एक परिष्कृत समाज का द्योतक है। भारत में अब भी इन्हें स्वीकार करने की हिचक ज़ारी है पर पहले की जैसी नहीं। ये अलग अलग वर्ग हैं, इन्हें स्वीकारना चाहिए। कानूनी स्वीकृति के बिना सामाजिक सुरक्षा पाना इन्हें संभव नहीं, इसलिए सरकार की सुरक्षा एवं कानूनी संरक्षण इन्हें अनिवार्य हैं। ये दोनों मिल

जाय तो धीरे धीरे सामाजिक स्वीकृति इन्हें मिल जाएगी, मिलना ही चाहिए क्योंकि यह भी जैविक सृष्टि है, इन्हें भी अपनी जैविक एवं आत्मिक ज़रूरतों को निभाते हुए स्वतंत्र जीवन बिताने का अधिकार है। उस अधिकार को तथाकथित बहुसंख्यकों को स्वीकारना ही चाहिए तब ही समाज सुसंस्कृत समाज के गरिमामय शिखर पर पहुँच जाएगा।

क्विर इन सबको सुरक्षित एवं संगठित करने वाला एक छत्ता है जिसका अपना अलग एवं विशाल दर्शन है। वह दर्शन संभावना का है, सुरक्षा का है। मतलब क्विर सिद्धान्त एल. जी. बी. टी को सुरक्षित एवं स्वतंत्र जीवन प्रदान करने के लिए गठित है जिसके तहत ये अल्पसंख्यक अपने स्वत्व को बनाए रखते हुए जी सकते हैं। इस प्रकार के एक नवीनतम विषय को आधार बनाकर प्रो. वनजा ने प्रस्तुत पुस्तक की तैयारी की है। यह हिन्दी साहित्य की पहली पुस्तक है इस विषय पर केन्द्रित। इसलिए निःसन्देह यह हिन्दी साहित्य को और आलोचना क्षेत्र को उन की चुनौतीपूर्ण देन अवश्य है। यह पहली बार नहीं, कुछ साल पहले 2011 में उन्होंने हिन्दी आलोचना क्षेत्र को बिलकुल अधुनातन विमर्श के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पक्ष का समग्र उद्धाटन करते हुए चौंका दिया था, "पारिस्थितिक विमर्श" से। वहीं से सचमुच हिन्दी साहित्य में पारिस्थितिक विमर्श की शुरुआत और वृद्धि हुई है। फिर उस विषय पर अनेक संगोष्ठियाँ भारत भर के हिन्दी विभागों ने आयोजित की हैं, बहुत सारे शोध प्रबन्ध निकले और अब भी शोध ज़ोरों पर है। पर उनकी पुस्तकों का सान रखने योग्य कोई पुस्तक पारिस्थितिकी पर अब तक

नहीं निकली है। लेकिन हिन्दी पट्टी और वहाँ के आलोचक धुरंधरों ने कहाँ तक इन पुस्तकों को और इस विदुषी लेखिका को स्वीकृति दी है, यह विचारणीय है।

अब की बार फिर से एक बिलकुल नए विषय को लेकर उपस्थित है प्रो. वनजा, क्विर विमर्श और एल जी बी टी। मुझे पूरा विश्वास है कि इससे हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में विमर्शों के क्षेत्र में नया जोश भर जाएगा। आलोचकों, जिज्ञासु छात्रों एवं शोधार्थियों में नई उमंग अवश्य उभर आएगी। एक नए विमर्श क्विर को सैद्धांतिक आधार अवश्य मिल जाएगा। इस प्रकार हिन्दी आलोचना की और अधिक वृद्धि हो जाएगी।

मैं इस दक्षिण की विदुषी महिला को सारा आशीर्वाद एवं अभिनंदन दे रहा हूँ। उस ईमानदारी के साथ निस्वार्थ भाव से पिछले पैंतीस-चालीस सालों से हिन्दी की सेवा कर रही है। निरन्तर पठन-पाठन में मग्न प्रो. वनजा को आगे भी अपनी सारस्वत साधना को ज़ारी रखने और हिन्दी भाषा एवं साहित्य की सेवा को बुलंद करने की शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक क्षमता प्रदान करने की प्रार्थना करते हुए सगर्व, सविनय, सादर यह अनूठी किताब छात्रों, पाठकों, विद्वानों के सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ।

प्रो. एन. मोहनन

मकयिरम

यू.सी. कॉलेज पी.ओ

आलुवा - 683102

मो. नं. 9447056148

अनुक्रम

समलैंगिकता, क्विर, क्विर सिद्धान्त	12
लेसबियनिज्म और साहित्य	62
गेयिसम और साहित्य	119
उभय लैंगिकता (Bisexuality) और साहित्य	169
ट्रान्सजेंडर: इतिहास, साहित्य और संस्कृति	196